शोध मंथन Vol. XIV No.III July-Sep. 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.870 (SJIF)

झारखण्ड के जनजातियों का पारम्परिक शासन व्यवस्था

प्राप्तिः 17.07.2023
स्वीकृतः 15.09.2023

55

डॉ० संतोष उरांव
असिस्टेंट प्रोफेसर (अतिथि), समाजशास्त्र विभाग
पी०पी०के० बुंडू कॉलेज
राँची, झारखण्ड
ईमेलः *santoshoraon50@gmail.com*

सारांश

जनजातीय समाज विविधता युक्त समाज है। कई जनजाति समूह मिलकर झारखण्ड की जनजाति समाज का निर्माण करते हैं, लेकिन राजनीतिक रूप से सत्ता के माध्यम से वैध शक्ति का प्रयोग कुछ ही जनजातियाँ कर पाती है, जो अपने समाज के परम्परागत राजनीतिक व्यवस्था के द्वारा समाज को संगठित और समाज में नियंत्रण स्थापित करने में सक्षम है। अन्य जनजातियाँ किसी न किसी कारण से परम्परागत रूप से राजनीतिक व्यवस्था में सत्ता के वैध शक्ति का राजनीति के माध्यम से अपने समाज में वैध शक्ति का प्रयोग नहीं कर पाती और समाज बिखरी अवस्था में है। झारखण्ड में 8 (आठ) आदिम जनजाति समूह पायी जाती है, जिसकी परम्परागत राजनीतिक व्यवस्था को वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था में मान्यता नहीं प्राप्त है तथा कुछ जनजाति समुदाय अपने आसपास की जाति व्यवस्था को स्वीकार कर लिया और उसी के द्वारा अपने समाज को नियंत्रित करती है और कुछ जनजाति समुदाय समय के साथ परम्परागत राजनीतिक शक्ति को बनाये नहीं रख पाये, जिससे नयी पीढ़ी के सदस्य द्वारा आगे बनाये रखने में रूचि नहीं रखा। कुछ जनजाति समुदाय जिनकी जनसंख्या अधिक पायी जाती है और अधिकांश क्षेत्रों में विस्तृत है, जो अभिजात जनजाति समुदाय मानी जाती है, जो अपने परम्परागत राजनीतिक व्यवस्था में सत्ता के वैध शक्ति का प्रयोग कर अपने समाज को संगठित एवं नियंत्रित करती है, जैसे उराँव जनजाति की पड़हा व्यवस्था एवं खड़िया समुदाय की ढोक्लो सोहोर, संथाल का मांझी परगना, हो जनजाति समुदाय का मानकी मुण्डा व्यवस्था, मुण्डा जनजाति का मानकी पारम्परिक राजनीतिक व्यवस्था विद्यमान है। जिनके माध्यम से समाज में वैध शक्ति को लागू करते हैं, लेकिन वैध शक्ति का प्रयोग वही सदस्यों के द्वारा प्रयोग करने का अधिकारी होता है, जो वह गाँव समाज का सदस्य माना जाता है, जो भुईंहरी एवं खुंटकट्टी से सम्बन्ध है, ना कि समाज का कोई भी कहीं न कहीं यह व्यवस्था वंशागत रहती है और यह व्यवस्था आगे चलती है।

मुख बिन्दु

पीर, भुईंहर, खुटकट्टी, मारुसी।

आदिवासियों में सदियों से परम्परागत स्वशासन व्यवस्था लागू है वे इस व्यवस्था का समुचित पालन करते है। झारखण्ड के जनजातियों में परम्परागत शक्ति संरचना पायी जाती है जिनके आधार पर कानून, न्याय और स्थानीय शासन का स्वरूप निर्धारित करते है झारखण्ड के सम्पूर्ण जनजातीय क्षेत्र में इन परम्परागत स्वशासन व्यवस्था का स्वरूप एवं प्रकार्यों की प्राकृति एक समान नहीं है। फिर भी स्थानीय शासन ही यह निर्धारित करती है कि गाँव के विभिन्न व्यक्तियों के अधिकार क्या होंगे तथा कौन व्यक्ति स्थानीय शासन का सदस्य हो सकता है। इन परम्परागत स्थानीय शासन के अधिकार ही परम्परागत जनजातीय शक्ति संरचना के वास्तविक आधार कार्य न केवल जनजातीय गाँवों में कानून और व्यवस्था बनाये रखना है बल्कि ये गाँव के विभिन्न जातिगत समूहों के पारस्परिक सम्बंधों का भी निर्धारण करते रहे है।

''ब्रिटिश सरकार द्वारा परम्परागत स्वाशासन व्यवस्था को मान्यता देने का झारखण्ड के संथाल परगना में शुरूआत जब 1774 ई0 में ब्रुक के जगह कप्तान जेम्स ब्राउन ने ली। 1778 ई0 तक ब्राउन ने लखिमपुर, अम्बर तथा सुलतानाबाद के जमींदारों को दबा दिया, पहाडिया लोगों की दशा सुधारने के लिए उसने एक योजना भी बनायी जिसका आगे चलकर क्लिवलैंड ने कार्यान्वयन किया। परम्परागत जनजातीय स्वाशासन को मान्यता देना इस योजना का प्रमुख लक्षण या ऑग्रत्त क्लिवलैंड की नियुक्ति के नौ मास के भीतर ही 47 सरदारों ने कम्पनी की अधीनता स्वीकार कर ली। 1300 लोगों को धनुर्धरों के रूप में सरकारी सेवा में लिया गया। जौराह नामक व्यक्ति को इनका प्रमुख बनाया गया। किन्तु 13 जनवरी 1784 ई0 को 29 वर्ष की आयु में क्लिवलैंड की मृत्यु हो गयी। धीरे–धीरे इनके द्वारा दी गयी सुविधायें समाप्त होने लगी। कृषि उपकरणों तथा बीजों का मिलना बंद हो गया। स्कूल बंद होते गये। अमन–चैन बनाये रखने के लिए देय भत्ता का मिलना बंद हो गया। 1827 ई0 में मांझी सभाओं की न्यायिक अधिकार समाप्त कर दिये गये। कप्तान टैनर को सर्वेक्षण के आधार पर 1824 में दामिन ए कोह की स्थापना हुई''।[1]

आदिम राजनीतिक संगठन

आदिवासी समाज में राजनीतिक संगठन को श्री वीकस तथा हाइजर ने तीन श्रेणियों में बाँटा है जो

1) प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत वे राजनीतिक संगठन आते हैं जिनमें कि कानून तथा सरकार का रूप इतना अस्पष्ट है कि उन्हें वास्तव में राजनीतिक संगठन कहना उचित नहीं होगा। इन समाजों में नेताओं का कोई निश्चित स्वरूप नहीं होता। इस कारण इसका स्थानीय समूह या परिवार पर कोई नियंत्रण नहीं होता। ऐसे समाजों के अन्तर्गत अपने–अपने समूह होते हैं जो अत्यधिक छिटके होते हैं। जनसंख्या भी बहुत कम होती है। इस कारण राजनीतिक व्यवस्था का संगठित स्वरूप भी विकसित नहीं हो पाता है।
2) द्वितीय श्रेणी के अन्तर्गत श्रेणी के समूहों की अपेक्षा जनसंख्या और आर्थिक उत्पादन की मात्र कुछ अधिक होती है। एक समूह अपने पास पड़ोस के समूह शासन नहीं होता वरन केवल कुछ आवश्यक वस्तुओं को प्राप्त करना या दूसरे समूह को हराकर वहाँ से निकाल देना होता है।
3) तृतीय श्रेणी के अनतर्गत वे समाज होते हैं जो कि जनसंख्या तथा आर्थिक उत्पादन की दृष्टि से उपरोक्त दो श्रेणियों से कहीं अधिक उन्नत अवस्था में हैं। इन समाजों में

राजनीतिक संगठन इतना व्यवस्थित होता है कि ये दूसरे समूहों को पराजित करके या तो उनसे हर्जाना वसूल करते हैं या उन्हें निम्न वर्ग के रूप में अपनों में मिला लेते हैं। ऐसे समाजों में शासन की बागडोर वंश परम्परागत कुलीन समूहों के हाथ में रहता है। आदिकाल में समाजों की राजनीतिक व्यवस्था का खर्च इतना संगठित नहीं होता था जितना की आधुनिक वर्त्तमान समाजों में। इनका शासन प्रबन्ध प्रायः स्थानीय समूहों में बँटकर वंश परम्परागत मुखिया द्वारा ही होता है जो कि प्रथा धर्म और अनेक अन्धविश्वासों के आधार पर शासन करती है और समूह में शांति और सुव्यवस्था कायम रखने का प्रयत्न करता है।

''प्रत्येक समाज या समुदाय में मानव जीवन को व्यवस्थित रखने के लिए शक्ति का प्रभावपूर्ण होना आवश्यक होता है। प्रत्येक समुदाय में कुछ लोग अवश्य होते हैं जिनमें शक्ति निहित होती है। यह व्यक्ति समूह के निर्णय को तथा व्यक्तिगत व्यवहार प्रतिमानों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी समूह के अन्तर्गत इस शक्ति का विस्तार किस वर्ग में होगा तथा शक्ति संपन्न व्यक्तियों, अन्य एवं व्यक्तियों के बीच संबंधों की प्रकृति किस प्रकार की होगी यह वह प्रमुख आधार है जिसके द्वारा समूह में एक विशेश शक्ति संरचना का निर्माण होता है। यही सम्पूर्ण समाज पर अंकुश रखता है''।[2]

झारखण्ड के जनजातियों का पारम्परिक राजनीतिक व्यवस्था का महत्व एवं इतिहास काफी पुराना है। जब दुनिया आदिवासियों को असभ्य माना जाता था, लेकिन जनजातियों का स्थानीय राजनीतिक इतिहास मौजूद था। राजनीतिक प्रमुख के नेतृत्व में स्वयं को संगठित कर समाज का निर्माण कर लिया था और अपने समाज को व्यवस्थित किया। इस पारम्परिक राजनीतिक व्यवस्था को जो भी बाहरी आक्रमणकारी आये, वह इसे तोड़ने की कोशिश किये या तो उसके महत्व को स्वीकार कर उसका उपयोग अपने अनुरुप प्रयोग करने की कोशिश किया गया है और तो और झारखण्ड छोटानागपुर के जनजाति समुदाय पारम्परिक वंशागत नेतृत्व के माध्यम से व्यवस्थित राज व्यवस्था का भी गठन कर शासन व्यवस्था अपने–अपने क्षेत्र में स्थापित किये, जिसमें छोटानागपुर के मुण्डा जनजाति के लोग मदरा मुण्डा के नेतृत्व में मुण्डा राज का गठन किया, जिसका क्षेत्रफल वर्तमान झारखण्ड के दक्षिणी छोटानागपुर में फैला था। पलामू प्रमण्डल में चेरो जनजाति के द्वारा शासक के रूप में उभरे और शासन व्यवस्था स्थापित किये, जिन्होंने मुगल शासक मराठा आक्रमणकारियों से लड़कर अपने राज्य को सुरक्षित किया। चेरो ने अपने शासन व्यवस्था का स्वरुप किला बनाकर किया, जहाँ से शासन व्यवस्था का संचालन किया करते थे। व्यवस्थित शासन थी इस तरह की शासन व्यवस्था का इतिहास झारखण्ड के एक प्रमुख जनजाति उराँव जनजाति की राजनीतिक इतिहास मौजूद है, जो कैमूर के पहाड़ियों में स्थित रोहतासगढ़ में किला का निर्माण कर शासन व्यवस्था स्थापित किया, जिसका प्रमुख पारम्परिक वंशागत शासन व्यवस्था के द्वारा नेतृत्व किया करती थी, इन्होंने भी राज्य में किला का निर्माण कर राजधानी का निर्माण किया गया था, जो बाहरी आक्रमणकारी से अपने राज्य को सुरक्षा प्रदान करता था, जिससे मराठा मुगलों द्वारा कभी भी भेद नहीं सका और अपने राज्य में स्वतंत्र पूर्ण राज्य का संचालन करती रही। वहीं ढालभूमगढ़ में भुईयां जनजाति के द्वारा अपने राजा के अधीनस्थ रहकर भुईयां लोग शासित होते थे, इनके द्वारा भी

अपने राज्य में किला का निर्माण किया गया था। घाटशिला में कमजोर शासकों से तो अपने राज्य को सुरक्षित रखा, लेकिन जब एक संगठित एवं मजबूत ब्रिटिश शासक के द्वारा जनजातियों पर 1767 में पहला आक्रमण इन्हीं जनजातियों के राज्य में घुसकर इनकी राज्य व्यवस्था को ध्वस्त किया, जबकि इससे पूर्व किसी शासक द्वारा जनजातियों की शासन व्यवस्था को ध्वस्त नहीं कर सका।

जब अंग्रेज भुईयां जनजाति की राज्य व्यवस्था को ध्वस्त कर आगे बढ़े, तो दूसरी हो जनजाति की राज व्यवस्था थी, जिससे हो लैण्ड के नाम से जाना जाता था, जिनके पारम्परिक नेतृत्वकर्ता शासन प्रमुख मानकी–मुण्डा थी, जिससे पीर के प्रमुख के रूप में जाना जाता था, इन्हीं मानकी मुण्डा को शासन प्रमुख माना गया था। मुण्डा गाँव का प्रमुख पीर का प्रमुख मानकी थे, जिसके माध्यम से अपने समाज को संगठित करते थे जो बेहद ही स्वतंत्रप्रिय जनजाति थे। जिन्होंने कभी आक्रमणकारियों के सामने हार नहीं मानी और अपने क्षेत्र को स्वतंत्र पूर्वक विचरण करते थे, लेकिन ब्रिटिश शासक अपना शासन व्यवस्था स्थापित कर जबरन कर वसूलना चाहती थी, लेकिन इनके नेतृत्वकर्त्ता अंग्रेजों के साथ किसी तरह का समझौता करने को तैयार नहीं थे, जब तक दबाव रहता था, तब तक मानकी मुण्डा अपने प्रजा से प्रति 'हार' चार आना कर वसूल कर देती थी, लेकिन जैसे ही दबाव कम होता था, कर वसूली करना छोड़ देते थे। हो जनजाति अपने पारम्परिक राजनीतिक व्यवस्था एवं नेतृत्वकर्त्ता के हाथो शासित होना चाहते थे। यही कारण है कि ब्रिटिश शासक को हो जनजाति की पारम्परिक शासन व्यवस्था के सामने झुकना पड़ा।

''1834 ई. में नये प्रशासनिक क्षेत्र का निर्धारण कर कोल्हान क्षेत्र का निर्माण किया, जिसमें शासन व्यवस्था स्थापित करने के लिए 1837 में विलकिन्सन रोल एक्ट के तहत पारम्परिक स्वशासन व्यवस्था को मान्यता प्राप्त हुई और यह व्यवस्था सम्पूर्ण ब्रिटिश शासनकाल तक चली, जब तक कि भारत 1947 में स्वतंत्र हुआ, लेकिन स्वतंत्र भारत में भी जनजातियों की क्षेत्रों में शासन व्यवस्था स्थापित करने के लिए ब्रिटिश शासक द्वारा निर्मित कानून का ही अधिकांश भाग की मान्यता दी गयी, जिसमें विलकिन्सन रोल एक्ट को मान्यता प्रदान की, जिससे की एक संतुलित व्यवस्था स्थापित हो सके''।[3]

लेकिन भारत सरकार द्वारा स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायत का गठन किया गया तो पंचायती राज अधिनियम 1959 के द्वारा बिहार सरकार पंचायती राज अधिनियम 1965 के द्वारा इससे समाप्त (लोप) कर दिया गया, लेकिन हो जनजाति के सदस्य के द्वारा कोर्ट की शरण में जाकर इनकी मान्यता पुनः बहाल करवाई। सन् 1974 में जो आज भी कोल्हान में स्थानीय शासन पारम्परिक व्यवस्था कायम है।

झारखण्ड राज्य के पश्चिमी सिंहभूम जिला अन्तर्गत कोल्हान एवं पोड़ाहाट अनुमण्डल में मुण्डा मानकी स्वशासन व्यवस्था प्रचलित है। कोल्हान–पोड़ाहाट आदिवासी 'हो' बहुत क्षेत्र है। प्राचीनकाल से 'हो' आदिवासी अपना समाज और गाँव चलाने के लिए एक शासन व्यवस्था बनाया, जिसे मुण्डा–मानकी व्यवस्था कहा जाता है। मुण्डा एक गाँव का मुखिया एवं गाँव के मुखिया को मानकी कहा जाता है, यह तो नपे–तुले शब्द में नहीं कहा जा सकता है कि मुण्डा मानकी व्यवस्था कब से चल रही है।

''ब्रिटिश सरकार के आने से पूर्व सिंहभूम का राज पोड़ाहाट के राजा द्वारा चलाया जाता था। राजा के शासनकाल में सिंहभूम के मूल निवासी 'हो' मुण्डा राजा के नियंत्रण में नहीं थे। सन् 1821 में ब्रिटिश सरकार ने सिंहभूम पर अपना आधिपत्य जमाया और पोड़ाहाट राजा से सिंहभूम क्षेत्र का दक्षिणी हिस्सा छीन कर अपने अधिकार में ले लिया और इस नये क्षेत्र का नाम कोल्हान गवर्नमेंट रखा। ब्रिटिश सरकार ने इस क्षेत्र को प्रशासन हेतु उपायुक्त के अधीन कर दिया। जिसे कोल्हान प्रशासन भी कहा जाता है''।[4]

10 दिसम्बर, 1836 में असुरा ग्राम के जामदार मानकी के साथ ब्रिटिश सरकार का एकरार हुआ था। एकरारनामा के आधार पर कोल्हान क्षेत्र के प्रशासन के लिए मानकी को तथा मुण्डा को अलग–अलग सनद पट्टा निर्गत किया, जिसे अब 'हुक्कमनामा' के नाम से जाना जाता है।

मानकी का हुक्कनामा

1. ''मानकी का पद मारूसी है, नजदीकी मर्द वजीस यदि लायक हो, तो बहाल होने का हक है, लेकिन यदि मानकी बरखास्त किया गया हो, तो मारूसी समाप्त हो जाता है।
2. मानकी अपने पीर के प्रति उत्तरदायी होता है तथा अपने के अन्तर्गत पड़ने वाले सभी ग्रामों के प्रति भी समान रूप से जिम्मेवार है।
3. मानकी अपने क्षेत्र के राजस्व वसूली मुण्डा के द्वारा जमा करने के प्रति उत्तरदायी होता है। यदि कोई मुण्डा उसके क्षेत्र का निश्चित अवधि पर लगान जमा नहीं करता है, तब मुण्डा के साथ ही मानकी भी उत्तरदायी होता है। मुण्डा द्वारा लगान नहीं देने पर मानकी से राजस्व लगान की वसूली की जाती है।
4. वसूली राजस्व में से मानकी को 10 प्रतिशत नाला (कमीशन) पाने का हक होता है।
5. मानकी का नया बन्दोबस्त करने, छोड़ा हुआ खेत का माल बढ़ाने तथा छोड़ा हुआ जोत की जमीन दूसरे रैयत के साथ बन्दोवस्त करने का हक है।
6. मानकी की मंजूरी लेकर मुण्डा मालगुजारी निश्चित करेगा, जिसका आधा मानकी को, आधा मुण्डा ले सकता है।
7. किसी भी विभाग के पदाधिकारी को अपने क्षेत्र में मदद तथा सहयोग प्रदान करेगा।
8. मानकी अपने इलाके का पुलिस पदाधिकारी है, सरकारी आदेश के मुताबिक पुलिस के रूप में कार्रवाई करेगा।
9. अपने इलाके के अपराधियों को गिरफ्तार कर थाना में सुपुर्द करेगा।
10. अपने इलाके में आपराधिक घटनाओं की सूचना सरकार को देना है। अपराधी को अपने इलाके में शरण देने अथवा छिपाने पर मानकी के विरुद्ध कार्रवाई होगी।
11. इलाका मानकी अपने क्षेत्र में छोटे–छोटे विवादों का निपटारा करेंगे और फैसले की जानकारी उपायुक्त को देंगे।
12. मानकी अपना इलाके के अलावे अन्य इलाकों के मानकी/मुण्डा के साथ मधुर संबंध कायम रखेगा।
13. किसी भी पंचायती में मानकी घूस लेकर कायम एकपक्षीय निर्णय नहीं लेगा और अनावश्यक विलम्ब नहीं करेगा तथा किसी भी सदस्यों को अनावश्यक परेशान नहीं करेगा।

14. इलाकों के सभी मुण्डा सही तथा उचित ढंग से कार्य करते हैं या नहीं, इसकी जानकारी उपायुक्त को देंगे तथा अपराधी प्रवृत्ति के मुण्डा के विरुद्ध कार्रवाई करने हेतु रिपोर्ट देंगे।
15. मानकी अपने हक एवं अधिकार का पालन करेगा। मानकी नालायक तथा हुक्कनामा के शर्त के अनुसार वादा खिलाफी करने, बुरे चाल–चलन के वजह से उपायुक्त महोदय के आदेश पर हटाया जा सकता है''।[5]

मुण्डा का अधिकार एवं हक

1. ''मुण्डा का ओहदा मारूसी है, किन्तु मुण्डा बरखास्त होने पर मारूसी हक समाप्त हो जाता है। नजदीकी मर्द वारिस होने तक एक जोड़ीदार मुण्डा की बहाली होती है।
2. परती जमीन नाबाद सरकारी जमीन सरकार के इजाजत के बिना कोई रैयत आबाद नहीं कर सकता है।
3. गैर–मजरुआ जमीन बन्दोबस्त करने का हक है।
4. निःअंशी फिरारी जमीन को उपायुक्त के आदेश से अपने कब्जे में रखकर बन्दोबस्ती करना है। सावित कास्तकार के रिश्तेदार का पहला हक है, अगर वह नहीं लेगा तो गाँव के पुराने रैयत को, अगर वह भी नहीं लेगा तो सरकार दूसरे रैयतों के साथ बन्दोबस्त कर सकती है।
5. नया बन्दोबस्त जमीन तैयार हो जाने के बाद दोन जमीन 6 साल से 7 साल तक बिना मालगुजारी के रहती है तथा गोड़ा जमीन में मालगुजारी नहीं लगती है, 6–7 साल के बाद दोन जमीन के लिए सेटलमेंट के बाकी मियाद तक आधी मालगुजारी मुण्डा और आधी मालगुजारी मानकी लेगा।
6. राजस्व वसूली का मुण्डा 16 प्रतिशत, मानकी 10 प्रतिशत तथा तहसीलदार 2 प्रतिशत नाला (कमीशन) लेने का हक है।
7. नये जमीन बन्दोबस्त करने पर मुण्डा उपायुक्त को सूचना देगा।
8. अपने ग्राम में बाहरी व्यक्ति के बसने पर उपायुक्त को सूचना देगा।
9. परती जमीन को बर्बादी से बचाएगा।
10. ग्राम के बाँध, तालाब, नदी से सिंचाई की व्यवस्था करेगा तथा ग्राम के रैयतों से मरम्मति करायेगा।
11. अपने ग्राम के अन्दर किसी भी आपराधिक घटना की जानकारी उपायुक्त महोदय को देंगे तथा चोर–डकैत को पकड़कर थाना को सुपुर्द करेंगे।
12. मुण्डा अपने मौजा का पुलिस अधिकारी है।
13. सड़क के किनारे लगे वृक्षों की देखभाल करेगा''।[6]

उपरोक्त मानकी एवं मुण्डा के अधिकार भारत के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी बरकरार है। इस व्यवस्था को भारतीय संविधान के अनुच्छेद–13 में संरक्षित किया गया है। मुण्डा–मानकियों के अधिकारों को किसी भी कीमत पर कम नहीं किया जा सकता है और ना ही छीना जा सकता है।

आदिवासियों में सदियों से परम्परागत स्वशासन व्यवस्था लागू है। वे आज तक इस व्यवस्था का समुचित अनुपालन करते हैं। संतालों में जो व्यवस्था है, उसमें सिर्फ मांझी हाड़ाम (प्रधान) ही एक ऐसा पद है जो वंशानुगत व्यवस्था के अंतर्गत आता है और इस पद का समर्थन प्रायः गाँव–समाज के एवं सभी वर्गों के लोग करते हैं। इस पद की पदधारी का विरोध यदा–कदा ही कुछ लोग करते हैं और इसके निदान के लिए अनुमण्डल पदाधिकारी एक सक्षम अधिकारी है, जो इसका निदान एक बैठक बुलाकर करते हैं, जिसमें गाँव या समाज के सोलह आने रैयत शिरकत करते हैं और तब समस्या का निदान रैयतों के मतदान के आधार पर होता है और बात यहीं खत्म नहीं हो जाती है। बाकी बचे पदों का चुनाव हर वर्श माघ महीने के अंत में प्रजातांत्रिक तरीके से होता है और यह खुली प्रक्रिया है, जिसमें गाँव के सभी वर्ग के लोग भाग लेते हैं। संताल समाज के गाँव का संचालन हेतू एक पूरी पंचायती व्यवस्था है, जिसके अन्तर्गत माँझी हाड़ाम (प्रधान सह धार्मिक प्रतीक) नायके (पुरोहित), कुडाम नायके (सह पुरोहित), जोग माँझी (युवा मामले यह धार्मिक पद) एवं पौराणिक (माँझी हाड़ाम के सहायक) तथा गोड़ैत (संदेश वाहक) के पद हैं। माँझी हाड़ाम गाँव के प्रधान एवं धार्मिक प्रतीक होते हैं। इनके बिना गाँव का एक पत्ता भी नहीं हिलता है। प्रत्येक सामाजिक धार्मिक अनुष्ठानों में इनकी उपस्थिति लगभग निश्चित मानी जाती है। आधुनिक व्यवस्था में पुलिस भी माँझी हाड़ाम के सहयोग के बिना किसी कार्रवाई में असहज एवं अक्षम हो जाती है। नायके गाँव के पुरोहित होते हैं और सभी धार्मिक अनुष्ठानों के मुखिया होते हैं। कभी–कभी व्यक्ति या पात्र के अभाव में नायके का पद माँझी हाड़ाम को ही सहज एवं स्वाभाविक रूप से प्राप्त हो जाता है। कुडाम नायके भी पुरोहित ही होते हैं, लेकिन वे गाँव के भीतरी गुप्त आत्माओं के पूजा–पाठ किया करते हैं। जोग माँझी युवकों के नायक होते हैं और वे संतालों के मुख्य पर्व–त्योहार जैसे–बाहा (होली सदृश पानी का पर्व) एवं सोहराय (बंधना) तथा शादी–विवाह का संचालन करते हैं। गोड़ैत संदेशवाहक का पद संभालते हैं। पौराणिक माँझी हाड़ाम की अनुपस्थिति में उनकी पद को संभालते हैं।

इस तरह से आदिवासियों (संतालों) में एक परम्परागत प्रणाली है जो कि प्रत्येक गाँव में स्वतः स्थापित एवं संचालित है, इन पंचायतों में आपसी झगड़ा एवं वैमनस्यता को भी अत्यंत ही सहज ढंग एवं खुली प्रक्रिया के द्वारा सुलझा लिया जाता है। इस तरह आदिवासी पुलिसिया संकट तथा कचहरियों से भी दूरी बनाये रखते हैं तथा शासन व्यवस्था को एक अनावश्यक बोझ से भी मुक्त रखते हैं।

छोटानागपुर के पश्चिमी क्षेत्र में अवस्थित उराँव जनजाति की पारम्परिक राजनीतिक पड़हा व्यवस्था व्यवस्थित राजनीतिक व्यवस्था पायी जाती है, जो सदियों से चली आ रही है।

छोटानागपुर की जनजातियों में परम्परागत शक्ति संरचना पायी जाती है जिसके आधार पर कानून, न्याय और सरकार का स्वरूप निर्धारित होता है। छोटानागपुर के उराँव जनजातियों में शक्ति संरचना के तीन आधार रहे हैं। पड़हा पंचायत, पद्दा पंचायत, गाँव पंचायत।

पड़हा और (पट्टी)

''पड़हा पट्टी, खूटकट्टी, भूँइहरी ये शब्द मुण्डारी समाज की ग्राम व्यवस्था और शासन प्रणाली के हैं। ये वे थे जो गोत्र प्रथा के दिन जिसमें एक ही गोत्र के लोग सम्मिलित रहते थे। यह

जमींदारी काल और नागवंशी राजाओं की हुकुमत के पूर्व के थे। जिस समय झारखण्ड में खूटकट्टी जमीन सारी की सारी आदिवासियों के हाथ में थी। ये आदिवासी जोत जमीन जो आरम्भ में 3614 वर्गमील थी। वर्त्तमान में 118 वर्गमील राँची जिला के अन्तर्गत 1903 सेटलमेन्ट के अनुसार''।[7]

छोटानागपुर में आदिवासियों की संख्या बढ़ जाने के कारण गाँव भी बढ़ने लगे। नए चूल्हे चौके बनने लगे। जहाँ तक बन पड़ा गाँवों के लोग मातृग्राम ही पूजा पाठ करते रहे। उनके ससन (कब्र शिला और सरना भी वे ही थे पर कठिनाई होने के कारण अन्त में नए ससन और सरने स्थापित करने पड़े अब पूजा पाठ क्रियाएँ तो भिन्न हुई परन्तु पुराने और नए गाँवों का सामाजिक और ग्राम्य शासन एक ही रहा ये टोला–टोले मिलकर बनी। इसी समूह (संगठन) को पड़हा अथवा पट्टी कहा गया। शुरू में पड़हा और पट्टी एक ही नाम थे पर नागवंशी राजाओं ने इस संस्था में कुछ अपने शासन व्यवस्था के अनुरूप हेरफेर कर पड़हा को पट्टी नाम दे दिया।

पड़हा का मुख्य नाम है मानकी या माँड़की हर एक गाँव का मुख्या जैसे मुण्डा कहलाता है वैसा ही हर पड़हा का प्रमुख मानकी कहलाता है। पर स्थान–स्थान में इसका रूख और ही है। खूँटी थाना की पूर्व में खूँटकटी का राज्य और उक्त थाने के पश्चिम भूंइहारी क्षेत्र कहा जाता है जो भूईहारी प्रांत में पड़हा नाम चलता है। प्रत्येक पड़हा आठ से बाहर गाँवों का बना रहता है। पड़हा में सब भूंईहार लोग सगोत्र है। वर्त्तमान में हर पड़हा में एक स्थायी कमिटी या पंचायत कायम हुई जो अब तक जारी है। यही संख्या ग्राम्यशासन का प्राण है। इसके कर्णधार या सभापति स्थायी होते हैं। हिन्दू लोगों की देखा देखी इन्हें पदवी का भी गर्व है कोई राजा कहलाता तो कोई दीवान कोई ठाकुर, कोई लाल कोई, पांडे और कोई कर्त्ता। इसी पड़हा को ग्राम्य शासन की रूप में उराँव लोगों द्वारा भी प्रबंध किया। आदिवासी शासन व्यवस्था में (जिसकी संरचना निम्न है) यह राजनीतिक संस्था आदिम काल से ही आदिवासियों की शासन व्यवस्था प्रणाली का मुख्य अंग रही है। इसी कारण से यह सर्वत्र प्रचलित रही थी। यह संस्था का नाम और काम अब तक पोड़ाहाट और सिंहभूम मे हो और संथालों में भी जारी है। पड़हा पद पर आसीन व्यक्ति को किसी तरह की सुख–सुविधा जुड़ी नहीं है। ना ही उन्हें किसी तरह का वेतन दिया जाता है। दैनिक जीवन में पड़हा राजा भी हल जोतता, बोझा ढोता है अर्थात् समाज के अन्य व्यक्तियों से उनके जीवन में फर्क नहीं रहता।

पड़हा

''पड़हा उराँव समाज की अपना राजनीतिक संगठन होता है। यह समाज को व्यवस्थित एवं संगठित रखता है। आदिवासी समाज में अपना राजनीतिक संगठन होता है। आदिवासियों का राजनीतिक जीवन परम्परा, प्रथा तथा धार्मिक विश्वास पर आधारित होता है। इसका संचालन गाँव के बड़े–बुजुर्गों द्वारा निमित पंचायत द्वारा होता है''।[8]

झारखण्ड के उराँव जनजातियों का सामाजिक संगठन तथा राजनीतिक संगठन सुव्यवस्थित है। यह संगठन परम्परा प्रथा तथा धार्मिक विश्वास पर आधारित है। परम्परागत संरचना के अन्तर्गत इनके सामाजिक संगठन की इकाई परिवार तथा राजनीतिक व्यवस्था की इकाई गाँव टोला रही है। ये गाँव प्रारम्भ में एकान्त तथा सुसंगठित होते थे जिनमें कोई एक टोला गाँव ही विकसित होकर गाँव में परिणत हो गया होता था। इसलिए इनके गाँव में एकरूपता होती थी जिसके द्वारा पूरी उराँव जनजाति समूह एक सामाजिक इकाई के रूप में अपने कार्य का संचालन करता था। इनके समाज में कुछ सामाजिक नियम होते थे। ये नियम पुराने रीति–रिवाज और कानून के रूप में होते थे। इनके

प्राचीन सांस्कृतिक प्रथा तथा व्यवस्था की सुरक्षा का भार घुमकुड़िया के सदस्यों पर होता था। उराँव जनजाति के सामाजिक विकास के साथ ही साथ जायदाद तथा प्रशासन का विचार उत्पन्न हुई और समाज को व्यवस्थित रखने, उसके नैतिक जीवन के ह्रास को रोकने तथा जायदाद की सुरक्षा के निमित्त सामाजिक नियम आगे चलकर एक संस्था के रूप में परिवर्तित हुआ जो पड़हा के नाम से प्रचलित हुआ और यही व्यवस्था गाँव की शासन व्यवस्था का क्रियान्वयन करने लगा। प्रत्येक पड़हा में एक समिति कायम की जो पड़हा पंचायत और प्रत्येक गाँव में गाँव सभा आज भी जारी है। यही आदिवासी समाज के ग्राम्य शासन की रीढ़ है।

पड़हा यहाँ के तमाम अदिवासियों का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, प्रशासनिक एवं न्यायिक व्यवस्था है। इस पड़हा व्यवस्था के बगैर यहाँ के निवासी चाहे किसी भी जाति, धर्म एवं संप्रदाय के क्यों न हो के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती। प्रशासनिक सुविधा को ध्यान में रखकर विभिन्न गाँवों को मिलाकर पड़हा का निर्माण किया गया जैसे कहीं 21 गाँवों को मिलाकर समन्वय स्थापित करता है तो उसे 21 पड़हा कहा जाता है। उसी प्रकार 7 पड़हा, 12 पड़हा, 21 पड़हा तथा 40 पड़हा तक का व्यवस्था बनाया गया है। पड़हा विशेश के प्रत्येक गाँव के आदेशानुसार उस गाँव की पहचान को बनाये रखने के लिए एक पड़हा झण्डा एवं उसका विशेष रंग जो दूसरे गाँव के झण्डों के रंग एवं डिजाइन से अलग होता है। उसी झण्डे एवं रंग पर गाँव का पहचान, मान–सम्मान एवं नियम–कानून निहित रहता है। उस गाँव के पड़हा झण्डा पर केवल लोगों की आस्था एवं विश्वास भर नहीं बल्कि यह भी विश्वास किया जाता है कि वहाँ के देवी–देवताओं का भी निवास उस पर है।

पड़हा पंचायत

''उराँव समाज प्राचीन समय से ही सुव्यवस्थित समाज था। इस समाज का विस्तार अपने आन्तरिक मामलों में विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। उराँव जनजीवन में एकता एवं शांति बनाये रखने के उद्देश्य से एक अन्तग्रामीण परिषद का निर्माण किया गया जिसे हम पड़हा नाम से जानते हैं''।[9]

मिखाइल कुजूर इस बात की पुष्टि करते हुए अपनी पुस्तक उराँव संस्कृति में लिखते हैं। खूँटीकट्टी और भूंइहरी की भाँति पड़हा पट्टी भी मुण्डा और उराँव समाज की ग्राम्य व्यवस्था और शासन प्रणाली का प्रमुख अंग है। आदिवासियों ने अपने पड़हा राज्य के महत्व का परिचय दिया था। पड़हा पट्टी पंचायत से बड़ा होता है। इसके अन्तर्गत पाँच से तीस गाँव तक होते हैं। कुछ क्षेत्रों में इससे भी अधिक गाँव को कई गाँव होने के कारण क्षेत्र काफी बड़ा हो जाया करता था इसलिए पूजा–पाठ की पद्धति में भिन्नता आ जाया करती है जो आज भी उसी रूप में प्रचलित है। सभी गाँवों की ग्राम्य शासन एक ही रहा किन्तु पूजा पाठ, भिन्न हो गयी। दस बारह गाँव मिलाकर एक संघ स्थापित किये जो पड़हा पट्टी कहलाया। इनकी इन्हीं विशेषता को देखते हुए विद्वानों, लेखकों ने प्रत्येक आदिवासी गाँवों को गणराज्य के रूप में देखा।

उराँव के शासन व्यवस्था में शासन की प्राथमिक इकाई गाँव एवं टोला होता है। दृष्टि से सुविधा के लिए कई गाँवों को मिलाकर पड़हा का निर्माण किया जाता है। टोला गाँव एवं पड़हा को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए कई महत्वपूर्ण पद होते हैं।

यह पद पारम्परिक रूप से अनुवांशिक होता है। परम्परा से चले आ रहे इस अनुवांशिक अधिकारी अपनी जाति समूह और गाँव के लोगों के साथ विभिन्न समयों में अन्तः क्रियाएँ करता है।

विभिन्न कार्य करता है और अपनी जाति तथा गाँव के लोगों के साथ प्रेम एवं भ्रातृत्व का सौहादपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करता है।

पद्दा पंचायत

''पद्दा पंचायत में पूरे गाँव का टोला सम्मिलित रहता है। परंपरागत नियम के अनुसार दो प्रमुख अधिकारी पहान और महतो होते हैं। दोनों अधिकारी भुइंहर वंश से प्रत्येक तीन वर्ष में चुने जाते हैं। पूर्व में प्रत्येक जन गाँव की ओर से कुछ जमीन अपने सेवा काल के लिए पाता था लेकिन उस जमीन के टुकड़े को वहन बेच सकता था ना बदल सकता था। इसके अलावा वह न तो किसी तरह का कर या उपहार अपने सेवा के बदले नहीं माँग सकता था''।[10]

छोटानागपुर में आधुनिक प्रशासन के आगमन के लगभग 2000 ई0 पूर्व ही उराँव लोगों ने अपना निजी ग्राम प्रशासन का विकास किया था। प्रत्येक गाँव में पंचायत शाब्दिक अर्थ में पाँच सदस्यों की परिषद है जो न केवल गाँव में शान्ति एवं व्यवस्था को बरकरार रखता है बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक और नैतिक आचार संहिता को लागू करता है। इसके अन्तर्गत टोला से आने वाला विवाद तथा गाँव का विवाद शामिल होता है जैसे परिवार विभाजन, सम्पति का बँटवारा, अत्याचार, बलात्कार, निषिद्ध यौन संबंध, भूतप्रेत तथा डायन बिसाही का झगड़ा आदि का निपटारा किया जाता है। इसलिए नर्मदेश्वर प्रसाद ने अपनी पुस्तक 'भारतीय समाज में जनजातिगण' में लिखा है पंचायतों में दिवानी, फौजदारी और लैंगिक सभी प्रकार के मुकदमों का फैसला होता है। पति–पत्नी में संबंध विच्छेद और विवाहित कन्या की विदाई के विवाद में पंचायत का कोई भी स्तर हो उसमें दोनों पक्ष, दोनों गाँव के पंच मौजूद होते हैं।

टोला पंचायत

''उराँव जातियों का गाँव बड़ा–छोटा दोनों प्रकार का होता है। छोटे गाँवों में टोले कम या नहीं के बराबर होते हैं लेकिन बड़े गाँवों में कई छोटे–छोटे टोले होते हैं। इस तरह टोले का निर्माण गाँव का क्षेत्र इंगित करने और विधि व्यवस्था को ठीक तरह से चलाने के लिए किया जाता है। प्रायः टोले का पेड़ के नाम पर या बुर्जुग व्यक्ति जो उस टोले में पहली बार बसाया गया था उसके नाम पर होता है। टोला बड़ा है तो प्रत्येक टोला स्तर पर एक छोटी पंचायत की व्यवस्था होती है। टोल पंचायत के सदस्य टोला के बुजुर्ग व्यक्ति होते हैं। छोटा टोला होने पर वह गाँव के पंचायत से ही संचालित होता है। ऐसे छोटे पंचायतों में छोटे–मोटे विवादों का फैसला किया जाता है जिस विवाद का निपटारा टोला पंचायत में नहीं हो पाता है उसे आगे पद्दा पंचायत में रखा जाता है''।[11]

1 महतो

महतो ही उराँव समुदाया और गाँव का मुखिया होता है। प्रत्येक गाँव में महतो का पद वंशानुगत होता है इसका पद दायित्वों से परिपूर्ण है। उसे अपनी संस्कषति एवं गाँव की आवश्यकताओं को देखते हुए अनेक कार्य करने पड़ते हैं वह ग्रामीणों को अपनी व्यवस्था के प्रति जागृति करने वाला व्यक्ति होता है। वह पारम्परिक झगड़ों का निपटारा करने एवं जरूरत के समय सदस्यों की सहायता करने का कार्य भी करता है। ग्रामीणों के बीच आपसी संघर्ष के समय पंच एवं मध्यस्थत का कार्य भी वही करता है और दो पक्षों की बातों को सुनने के पश्चात उचित निर्णय करता है। वह ग्रामिणों के बीच गुटबंदी की प्रक्रिया को रोककर सामूहिक संगठन को बनाये रखता है। गाँव के सभी व्यक्ति

पड़हा के सदस्य होते हैं। गाँव या टोला स्तर के बैठक में महतो ही अन्य लोगों के समक्ष प्रतिनिधित्व करता है। उराँव परम्परा के अनुसार समाज के नेता यह महतो का पद में पुरूष वर्ग ही होता है। यदि परिस्थितिवष पुरूष घर में न हो तो महिला भी इस कार्य को कर सकती है लेकिन नेतृत्व का स्वरूप वंशानुगत ही होता है।

2 पाहन

पाहन उराँव समाज का धार्मिक प्रमुख व्यक्ति होता है। इनका कार्य गाँव के देवी–देवताओं की पूजा करना होता है। इनके पास समाज की पवित्र धर्म होती है। उराँवों के पर्व त्यौहारों में पाहन की मुख्य भूमिका होती है। पूजा–पाठ का कार्य पाहन के द्वारा ही किया जाता है। कृषि कार्य जैसे धान बुनी रोपनी आदि का आरम्भ करते हैं। साथ ही साथ गाँव वाले अपना कार्य आरम्भ करते हैं। साथ ही गाँव के किसी–किसी भी परिवार में जन्म मृत्यु या विवाह हो तो वहाँ भी पाहन द्वारा पूजा पाठ होने के बाद ही अन्य कार्य का प्रारम्भ होता है। गाँवों में किसी प्रकार की महामारी आने पर गाँव वाले मिलकर पुनः पाहन से पुजा कराते हैं। उनका सोचना है कि पाहन ने ठीक से पूजा पाठ नहीं किया होगा। इस तरह पाहन और महतो दोनों ही उराँव समाज के अच्छाई के लिए संयुक्त रूप से जिम्मेवार होते हैं।

पड़हा पंचायत के सदस्य होते हैं। वैसे तो गाँव का प्रत्येक व्यक्ति पड़हा का सदस्य होता है। ये पड़हा पंचायत के अधिकारियों एवं अन्य प्रमुख सभा तथा बैठकों में गाँव का प्रतिनिधित्व करते हैं। उराँवों के बीच एक कहावत प्रचलित है। पाहन गाँव बनाता है महतो गाँव चलाता है। अर्थात् पाहन गाँव के देवी–देवताओं को प्रसन्न रखता है जिससे गाँव में किसी तरह का दैविक प्रकोप नहीं होता है और गाँव के लोग भयमुक्त रहते हैं तथा महतो गाँवों में अपनी शासन व्यवस्था को दुरूस्त रख पाता है। पाहन का चुनाव प्रत्येक तीन या पाँच वर्ष में होता है। पाहन का पद अधिकतर गाँवों में वंशानुगत होता है। समय समाप्त होने पर पूर्णिमा के दिन गाँव के युवा एवं बुजुर्ग पुरूष चाला टोंका में उपस्थित होते हैं। इस प्रक्रिया में कार्यरत पाहन भी उपस्थित रहता है। एक व्यक्ति को आँख में पट्टी बाँध दिया जाता है और चालाटों का में पूजनोपरांत पट्टी बाँध युवक गाँव की ओर आता है। पाहन के साथ और बुजुर्ग एवं युवक होते हैं जो पट्टी बाँध युवक के साथ चलते हैं। पट्टी बंधा युवक किसी भी दरवाजे में जाकर रूक जाता है। युवक जिस दरवाजे में रूकता है। उस घर के बड़े–बुजुर्ग को पहान बना दिया जाता है।

3 पनभरा

पहान के प्रत्येक पूजा–पाठ में पनभरा सहायता करता है जैसे गाँव की पूजा स्थल की सफाई, पूजा स्थल की देखभाल आदि।

4 करताहा

परम्परा के विरूद्ध होने वाले कार्य का निर्वाह करता है, जैसे एक ही गोत्र के बीच विवाह संबंध, दूसरे जाति के साथ अवैध संबंध आदि। यदि करताहा द्वारा संभव नहीं होता है तो उसे पड़हा पंचायत में पड़हा राजा के सुपूर्द करदिया जाता है।

5. पड़हा राजा

पड़हा राजा, पड़हा का मुख्य व्यक्ति होता है, यह पद बहुत आदरणीय होता है। पड़हा राजा अपने प्रत्येक काम में अपने सहयोगियों, दीवान, कोटवार आदि की मदद लेता है।

6. दीवान

यह पड़हा राजा का सहयोगी एवं सलाहकार भी होता है।

7. कोटवार

कोटवार भी अप्रत्यक्ष रूप से पड़हा राजा का सहयोगी होता है। कोटवार मुख्यतः पड़हा राजा का दूत होता है। वह सभी प्रकार की सूचनाएँ पड़हा राजा द्वारा निर्देशित सूचनाएँ गाँववालों को देता है। चाहे वह धर्म, पूजा–पाठ से संबंधित हो, गाँव का सूचना पड़हा राजा तक पहुँचाने की जिम्मेदारी हो। पड़हा राजा जिस गाँव में रहता है उसे राजा गाँव कहते हैं।

पड़हा पंचायत के कार्य

i) ''गाँवों के बीच शांति एवं सहयोग बनाये रखना और दो गाँवों के बीच उभरे झगड़ों को सुलझाना है।

ii) पड़हा पंचायत अपील कोर्ट भी है। आदिवासियों में यदि गाँव के स्तर पर मामला का निपटारा न हो हो पाये तो इसे पड़हा पंचायत में ले जाया जाता है।

iii) पड़हा पंचायत उराँव प्रथागत नियमों (Customory Laws) कोड को लागू करता है।

iv) पड़हा पंचायत गैर उराँव के साथ अवैध संबंध पर प्रतिबंध लगाता है और जाति के भीतर शादी की प्रथा एवं गोत्र से बाहर की प्रथा को लागू करता है। इस मामले में पाये गये अपराधों को खत्म करके उराँव समाज से बाहर कर देता है। ऐसे अपराधी मेड़ी तथा रीति द्वारा ही फिर से समाज में प्रवेश करता है''।[12]

परम्परागत स्वाशासन में जो फैसला जनहित में परम्परागत स्वाशासन व्यवस्था सदियों से चली आ रही यह एक स्वतंत्र इकाई है। ग्रामीण अधिकारों की रक्षा करना इनकी जिम्मेवारी है। इस व्यवस्था के तहत चुनाव के बदले जन समूह में आम सहमति से चयन करने की प्रक्रिया को प्राथमिकता दी जाती है। परम्परागत स्वाशासन व्यवस्था में जाति धर्म समुदाय से ऊपर उठकर संवैधानिक मान–सम्मान की रक्षा करने का वाद–विवाद समस्या का निपटारा ग्राम प्रधान यथा मानकी मुण्डा की अध्यक्षता में हातु–टुनूब (गाँव में आयोजित की जाने वाली बैठक) के माध्यम से सम्पन्न करायी जाती है। इसमें यह भरसक प्रयास किया जाता है कि समस्या का निष्पादन के क्रम में आम जनता भी अपना विचार सबके सामने रख सके ताकि मानकी मुण्डा पर यह आरोप नहीं लग सके कि वे आम जनता को अहमियत नहीं देता है। या विचार ली जाती है वह काफी मायने रखता है। विचार–विमर्श के क्रम में दोनों पक्षों का ख्याल रखा जाता है, ताकि भविष्य में इसकी वजह से गाँव की विधि व्यवस्था न बिगड़े तथा दोनों पक्षों के बीच दुश्मनी का कारण न बने बल्कि अच्छे वातावरण (माहौल) में दोनों पक्षों को राजीनामा (समझौता) कराना ही परम्परागत स्वाशासन व्यवस्था की प्राथमिकता है।

संदर्भ

1. शर्मा, विमला चरण., कीर्ति, विक्रम. (2008). झारखण्ड की जनजातियाँ. क्राउन पब्लिकेशनः राँची. पृष्ठ **310.**
2. कुमार, संजीव. (2010). झारखण्ड परिचय. लुसियन्ट प्रकाशनः पटना. पृष्ठ **145.**
3. विद्यार्थी, एल०पी० (1976). द ट्राइबल कल्चर ऑफ इंडिया. कनसेप्ट पब्लिशिंग हाऊस. नई दिल्ली. पृष्ठ **258.**

4. वर्मा, उमेश कुमार. (2007). झारखण्ड की जनजातीय समाज. प्रकाशन सुबोध ग्रंथ मालाः राँची. पृष्ठ **209.**
5. बघेला, डी०एस०., सिंह, टी०पी०. (2005). राजनैतिक समाजशास्त्र. विवेक प्रकाशनः जवाहर नगर, दिल्ली. पृष्ठ **252.**
6. सिंह, सुनील कुमार. (2003). झारखण्ड परिदृश्य. रीडर्स कॉर्नरः फेजर रोड, पटना. पृष्ठ **153.**
7. रॉय, एस०सी०. (2010). द उराँव ऑफ छोटानागपुर. क्राउन पब्लिकेशनः राँची. पृष्ठ **125.**
8. उराँव, सोमे. (2012). झारखण्ड में परम्परागत स्वशासन व्यवस्था. राजभवनः राँची. पृष्ठ **24.**
9. हसनैन, नदीम. (1997). जनजातीय भारत. जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स. पृष्ठ **245.**
10. प्रसाद, वाइ०बी०. (2004). जनजातीय अधिकार एवं विकास. कैलाश पेपर कनवर्शन्स प्रा0 लि0ः राँची. पृष्ठ **35.**
11. कुमार, संजीव. (2010). झारखण्ड परिचय. प्रकाशन लुसियन्ट प्रकाशनः पटना. पृष्ठ **23.**
12. कात्यान, रश्मि. (2016). झारखण्ड पंचायत राज्य अधिनियम. क्राउन पब्लिकेशनः राँची. पृष्ठ **233.**